कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

झलकारी बाई (1830–1858)

स्थान: *झाँसी, उत्तर प्रदेश*

जब हम झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की बात करते हैं, तो एक और नाम सामने आता है — जो उनके जितनी ही बहादुर थीं, और जिनकी कहानी उतनी ही प्रेरक है। वो थीं — **झलकारी बाई**।

वे झाँसी के पास एक दलित कोली परिवार में जन्मी थीं। बचपन से ही वे आम लड़कियों जैसी नहीं थीं — खेतों में काम करने के साथ-साथ वे तलवार चलाना, घुड़सवारी और निशानेबाज़ी सीखती थीं। कहा जाता है कि एक बार उन्होंने अकेले ही एक बाघ से मुकाबला किया था।

जब रानी लक्ष्मीबाई ने महिलाओं की एक सेना बनाई — **'दुर्गा दल'** — तो झलकारी बाई उसमें शामिल हुईं। उनका साहस और नेतृत्व देखकर रानी उन्हें अपना विश्वासपात्र मानने लगीं।

1857 में झाँसी अंग्रेजों से घिर गई थी। रानी को किले से बाहर निकालना ज़रूरी था, ताकि वो बाकी सेनाओं से जुड़ सकें।

तब झलकारी बाई ने एक अनोखी योजना बनाई। वे हूबहू रानी जैसी दिखती थीं। उन्होंने रानी जैसे कपड़े पहने, ज़ेवर पहने, और सेना के सामने जाकर खुद को रानी बताकर अंग्रेजों का ध्यान भटका दिया।

अंग्रेजों ने सोचा — **'हमने रानी को पकड़ लिया!'** इस बीच असली रानी सुरक्षित निकल गईं।

जब अंग्रेजों को सच्चाई का पता चला, तब वे हैरान रह गए। झलकारी बाई को या तो मार डाला गया, या कुछ किस्सों के अनुसार वे बच निकलीं और बाद में लंबी उम्र तक रहीं।

सबक: झलकारी बाई हमें सिखाती हैं कि बहादुरी किसी जाति या लिंग की मोहताज नहीं होती। उन्होंने अपने प्राणों की बाज़ी लगाकर इतिहास को बदल दिया। जब आप कभी डरें, या सोचें कि "मैं अकेला क्या सकती (सकता) हूँ?" — तो झलकारी बाई की कहानी याद कर लेना।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

ऊदा देवी पासी — दलित बेटी, बहादुर शहीद

स्थान: *अवध, उत्तर प्रदेश*

1857 का साल था। उत्तर भारत में ग़ुस्सा उफान पर था। अंग्रेजों के अन्याय से तंग आकर जगह-जगह बग़ावतें हो रही थीं। इस क्रांति में एक नाम गरीब दलित किसान परिवार से था — ऊदा देवी पासी।

अवध (उत्तर प्रदेश) की ऊदा देवी, नवाब वाजिद अली शाह को हटाने के बाद बेगम हज़रत महल के नेतृत्व में महिला सेना से जुड़ गईं। **वे केवल सैनिक नहीं, बल्कि नेता और जुझारू योद्धा थीं।**

पति मक्का पासी के शहीद होने पर उन्होंने कसम खाई — **"फिरंगियों को अवध से भगा दूंगी!"**

जब अंग्रेजों की सेना लखनऊ पर कब्ज़ा जमाने के लिए आगे बढी, तब ऊदा देवी ने एक योजना बनाई। वे एक बड़े पीपल के पेड़ पर चढ़ गईं, अपने पास बंदूकें लेकर। जैसे ही अंग्रेज सैनिक नज़दीक आते, पेड़ पर बैठी ऊदा देवी उन पर गोली चला देती। देखते ही देखते, उस बहादुर वीरांगना ने लगभाग आठ से दस ब्रिटिश सैनिक मार गिराए।

अंग्रेज अफसर हैरान हो गए ये सोचकर की आखिर कौन है यह भारतीय सैनिक जो हमारे जवानों को मार रहा है? जब अंग्रेजों को पता चला कि पेड़ पर से हमला करने वाला एक महिला सैनिक है, तो वे चकित रह गए। गिरफ्तारी से बचने के लिए ऊदा देवी ने खुद को गोली मार ली।

सबक: ऊदा देवी पासी की कहानी हमें सिखाती है कि साहस कभी किसी जात-पात या लिंग से नहीं जुड़ा होता। औरतें सिर्फ़ घर संभालने के लिए नहीं होतीं — वो ज़रूरत पड़ी तो बंदूक भी उठा सकती हैं। देश के लिए मर-मिटने का जज़्बा हर किसी के दिल में हो सकता है। अगर ऊदा देवी जैसे लोग अपने जीवन को दांव पर लगा सकते हैं, तो हम कम से कम अपने अधिकार और अपने देश के लिए आवाज़ तो उठा ही सकते हैं।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

मातंगिनी हाज़रा – गोलियों के सामने तिरंगा थामे खड़ी एक दादी

स्थान: *मिदनापुर, पश्चिम बंगाल*

ये कहानी है एक बुज़ुर्ग महिला की, जो न तो सैनिक थीं, न ही नेता... लेकिन उनके भीतर था **आज़ादी का ज़ुनून**। उनका नाम था — **मातंगिनी हाज़रा**।

मातंगिनी का जन्म 1870 में बंगाल के एक छोटे से गाँव में हुआ था। बचपन से ही गरीबी और संघर्ष उनके साथी रहे। छोटी उम्र में शादी, फिर जल्दी ही पति का निधन... लेकिन इन दुखों ने उन्हें तोड़ा नहीं, बल्कि और मज़बूत बना दिया।

जब गाँधीजी ने अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ 'नमक सत्याग्रह' शुरू किया, तो **60 साल की उम्र में मातंगिनी हाज़रा भी आंदोलन में कूद पड़ीं**। गाँव-गाँव घूमकर लोगों को आज़ादी की लड़ाई से जोड़ने लगीं। ऐसा करने के लिए, अंग्रेजों ने उसे जेल भेज दिया। लेकिन इसने उन्हें स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने से नहीं रोका। वे ब्रिटिश शासन के खिलाफ लड़ने के लिए लोगों को संगठित करती रहीं।

1942 में भारत छोड़ो आंदोलन शुरू हुआ। मातंगिनी अब 72 साल की थीं, लेकिन हिम्मत से बिल्कुल जवान। एक दिन उन्होंने गाँव के 6000 लोगों के साथ वे तिरंगा लेकर मिदनापुर की एक पोइस चौकी की ओर चल दी। उद्देश्य था यूनियन जैक को हटाना और तिरंगा फहराना।

अंग्रेज़ सिपाही डर गए – और गोलियाँ चलाने लगे। सब पीछे हट गए, लेकिन मातंगिनी नहीं रुकीं। **3 गोलियाँ उनके शरीर में लगीं...** लेकिन उनके हाथ में तिरंगा तब तक लहराता रहा, जब तक वो गिर नहीं गई।

उनकी आख़िरी साँसों में भी बस एक ही शब्द था — "वंदे मातरम्"।

सबक: मातंगिनी हाज़रा हमें सिखाती हैं कि **देशभक्ति उम्र की मोहताज नहीं होती।** अगर दिल में साहस और सच्चा इरादा हो, तो **एक अकेली बुज़ुर्ग महिला भी साम्राज्य की जड़ों को हिला सकती है।** हम सबको आज़ादी ऐसे ही **हज़ारों गुमनाम नायकों** की कुर्बानी से मिली है। हमें इसे कभी भूलना नहीं चाहिए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

दुर्गाबाई देशमुख: छोटी उम्र, बड़ा सपना

स्थान: *राजमुंद्री, आंध्र प्रदेश*

1909 में आंध्र प्रदेश के राजमुंद्री में एक साधारण परिवार में जन्मी दुर्गाबाई देशमुख के सपने बहुत बड़े थे। 10 साल की उम्र में उन्होंने काकीनाडा में महिलाओं के लिए हिंदी पाठशाला शुरू की और माँ के साथ **500 से ज़्यादा महिलाओं को हिंदी सिखाई,** ताकि वे आज़ादी की लड़ाई में जुड़ सकें।

महात्मा गांधी और कस्तूरबा गांधी ने उनकी पाठशाला देख कर उन्हें सच्ची देशभक्त कहा। उसी दिन से उन्होंने खादी पहनना शुरू किया और अंग्रेज़ी स्कूलों का बहिष्कार किया।

एक और हिम्मत की बात सुनो — जब वे **सिर्फ 8 साल की थीं**, तब उनका **बाल विवाह** हो गया था। लेकिन बड़ी होते ही उन्होंने अपने पति को छोड़ दिया और **पढ़ाई पूरी करने का फैसला किया**। उन्होंने **बी.ए., एम.ए. और वकालत** की पढ़ाई की, और फिर मद्रास (आज का चेन्नई) में वकील बन गई।

लेकिन सिर्फ़ वकील बनना ही उनका सपना नहीं था — उनका सपना था **देश की सेवा** करना। उन्होंने **नमक सत्याग्रह** और **भारत छोड़ो आंदोलन** जैसे आंदोलनों में हिस्सा लिया और **कई बार जेल** भी गई।

आज़ादी के बाद उन्होंने **‘आंध्र महिला सभा’** की स्थापना की, जो आज भी स्कूल, अस्पताल और अनाथालय चला रही है। वे **संविधान सभा की सदस्य** बनीं और **बाल विवाह, दहेज तथा पर्दा प्रथा के खिलाफ आवाज़ उठाई।**

उनके कार्यों के लिए 1975 में उन्हें **‘पद्म विभूषण’** से सम्मानित किया गया।

सबक: दुर्गाबाई हमें सिखाती हैं कि अगर इरादे मजबूत हों, तो कोई भी लड़की — चाहे वो कितनी भी छोटी क्यों न हो — बड़ा बदलाव ला सकती है। पढ़ाई, हिम्मत और मेहनत से वो देश की दिशा बदल सकती है। दुर्गाबाई की कहानी, हर बच्चे के लिए एक मिसाल है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

मल्लू अक्का की कहानी: जंगलों से जेल तक की लड़ाई

स्थान: *वारंगल, आंध्र प्रदेश*

बहुत साल पहले, आंध्र प्रदेश के एक छोटे से गाँव में मल्लू नाम की बच्ची रहती थी। पिता किसान थे, पर ज़मींदारों के शोषण ने उनका जीवन कठिन बना दिया था। मल्लू ने बचपन से देखा कि कैसे गरीब किसानों से जबरन लगान वसूला जाता और विरोध करने वालों को पीटा जाता।

सिर्फ़ 11 साल की उम्र में उसने अंग्रेज़ी सरकार और ज़मींदारों के खिलाफ नारे लगाए। 13 की होते-होते वह तेलंगाना आंदोलन में शामिल हो गई। धीरे-धीरे मल्लू अक्का लोगों के हक़ की लड़ाई की नेता बनी — गुप्त बैठकों में जाती, लोगों को जागरूक करती, और ज़रूरत पड़ने पर बंदूक भी उठाती।

एक बार मल्लू और साथियों ने एक ज़मींदार के घर से अनाज लेकर गरीबों में बाँट दिया। जब कुछ लोगों ने इसे चोरी कहा, तो मल्लू बोली: **“जब अंग्रेज़ और ज़मींदार हमसे सब कुछ लूटते हैं, तो अगर हम थोड़ा सा अनाज अपने भूखे लोगों के लिए लेते हैं, तो उसे चोरी कैसे कहा जाए?”**

जब मल्लू 15 साल की थी, तब उन्हें **गिरफ्तार** कर लिया गया। पर जेल में भी मल्लू ने हार नहीं मानी। उन्होंने वहाँ कैदियों को पढ़ाना और हिम्मत देना शुरू किया। आगे चलकर मल्लू अक्का आंध्र प्रदेश विधानसभा की सदस्य बनीं। उन्होंने हमेशा कहा — **“मैं नेता नहीं, जनता की साथी हूँ।”**

सबक: उम्र छोटी हो या बड़ी, अन्याय के खिलाफ आवाज़ उठाना जरूरी है। साहस, सच्चाई और दूसरों के लिए जीने की भावना ही असली ताक़त है। बदलाव लाने के लिए किसी बड़ी कुर्सी की नहीं, बड़े दिल और मजबूत इरादों की ज़रूरत होती है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

कर्तार सिंह सराभा - वो शेरदिल नौजवान जो फांसी पर भी मुस्कराया

स्थान: *लुधियाना, पंजाब*

कर्तार सिंह सराभा का जन्म 1896 में पंजाब में हुआ। बचपन से ही वे होशियार और जिद्दी थे, पर सबसे गहरी बात थी — देश के लिए उनका प्यार। 15 साल की उम्र में ही उनके दिल में आज़ादी की चिंगारी भड़क उठी।

16 साल की उम्र में पढ़ाई के लिए अमेरिका गए, जहां भारतीय प्रवासियों को भी आज़ादी की कोशिशों में जुटा पाया। यहीं वे **ग़दर पार्टी** से जुड़े, जो विदेशी धरती से भारत में क्रांति लाने की तैयारी कर रही थी।

कर्तार सिंह ने निडर होकर ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ काम शुरू किया — गुप्त बैठकों में लोगों को तैयार करना, देशभक्ति से भरे लेख और कविताएं लिखना, और पर्चे छापना। 1914 में वे भारत लौटे और बगावत की योजना में जुट गए। लेकिन जल्द ही अंग्रेज़ों को खबर मिल गई और कर्तार सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। अदालत में जब उनसे अंग्रेजों के खिलाफ काम करने के लिए माफी मांगने को कहा गया तो उन्होंने गरजते हुए कहा –

"मैं माफी क्यों मांगूं? आप सभी को हमें गुलाम बनाने के लिए माफी मांगनी चाहिए। देश को आज़ाद कराना कोई जुर्म नहीं। अगर मुझे 100 ज़िंदगियां मिलतीं, तो मैं सब देश के लिए कुर्बान कर देता!"

सिर्फ़ 19 साल की उम्र में उन्हें फांसी दे दी गई। वे भारत को आज़ाद होते नहीं देख पाए, पर उनकी शहादत ने हजारों युवाओं को प्रेरित किया। **शहीद-ए-आज़म भगत सिंह** उन्हें अपना गुरु मानते थे।

सबक: कर्तार सिंह की कहानी हमें सिखाती है कि उम्र कभी मायने नहीं रखती – मायने रखती है आपकी नीयत, आपका हौसला और देश के लिए आपका प्यार। हम सब इस आज़ादी के कर्ज़दार हैं – उन युवाओं के जो बिना किसी स्वार्थ के, बिना डरे, देश के लिए हंसते-हंसते बलिदान हो गए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

वीरबाला कनकलता की कहानी

स्थान: *बारंगबाड़ी, असम*

बहुत साल पहले, असम के एक छोटे से गाँव में एक बहादुर लड़की पैदा हुई – कनकलता बरुआ। उम्र सिर्फ़ 17 साल, लेकिन दिल में देश के लिए अपार प्रेम और हिम्मत। बचपन में ही माँ-बाप का साया उठ गया, दादी ने पाला। पढ़ाई में तेज, घर के कामों में मददगार, पर मन में सवाल – **"मेरा देश आज़ाद क्यों नहीं?"**

1942 में गांधी जी के 'भारत छोड़ो आंदोलन' से देश भर में हलचल मच गई। असम में तय हुआ कि अंग्रेजों के थानों पर तिरंगा फहराया जाएगा। कनकलता ने ठान लिया – "अब घर में नहीं बैठूंगी।"

वह 80 मील दूर गोहपुर थाने पर तिरंगा फहराने साथियों के साथ पैदल चलीं। हाथ में तिरंगा, होंठों पर नारा – **"करो, या मरो!"** थाने के पास पुलिस ने चेतावनी दी – **"एक कदम आगे बढ़े तो गोली मार देंगे!"** कनकलता गराज के बोली – "हम सही के लिए लड़ रहे हैं। **हमारा मार्च योजना के अनुसार जारी रहेगा।** आप वही करें जो आपको करना है।"

कनकलता आगे बढ़ीं... और तभी अंग्रेजों ने उस पर गोली चला दी। गोली सीधा कनकलता की छाती में लगी। लेकिन आगे क्या हुआ जानकर हैरानी होगी – **गोलियां चलीं, कनकलता गिरीं, लेकिन उनका तिरंगा नहीं झुका।**

यह देखकर एक और युवा लड़का मुकुंद तिरंगा लेने के लिए दौड़ा। पुलिस ने उसे भी गोली मार दी। वो भी शहीद हो गया। फिर भी बाकी साथी झंडा लेकर आगे बढ़ते गए... **और अंततः, उस थाने पर तिरंगा लहराया गया।**

सबक: कनकलता आज़ादी का सूरज उगते देख नहीं सकीं। लेकिन उनके साहस और बलिदान ने हजारों युवाओं को प्रेरित किया कि वो उठें, लड़ें और देश को आज़ाद कराएं। हमारी आज़ादी उन्हीं वीरों की देन है – जो हँसते-हँसते देश पर कुर्बान हो गए। कनकलता जैसी लड़कियाँ हमें याद दिलाती हैं कि देशभक्ति के लिए उम्र नहीं, जज़्बा चाहिए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

शिरीष कुमार मेहता – तिरंगे के लिए जान देने वाला निडर लड़का

स्थान: *नंदुरबार, महाराष्ट्र*

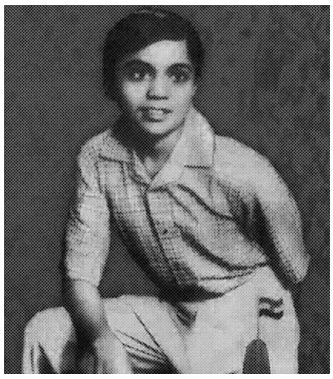

ये कहानी है एक किशोर की, जो सिर्फ़ 15 साल का था, लेकिन उसके दिल में **हिम्मत और देशभक्ति का ज्वालामुखी** धधक रहा था। उसका नाम था – **शिरीष कुमार।**

साल था **1942**, भारत छोड़ो आंदोलन पूरे देश में फैल चुका था। जगह-जगह पर लोग अंग्रेज़ों के दफ्तरों, थानों और सरकारी इमारतों से यूनियन जैक हटाकर तिरंगा फहरा रहे थे। महाराष्ट्र के नंदुरबार में भी बच्चों और युवाओं का एक बड़ा जुलूस निकला। उस जुलूस का नेतृत्व कर रहा था एक 15 साल का लड़का – **शिरीष कुमार**।

हाथ में तिरंगा लिए जैसे ही जुलूस अंग्रेज़ दफ्तर के पास पहुँचा, पुलिस ने रास्ता रोक लिया। उन्होंने चेतावनी दी – "पीछे हट जाओ वरना गोली चलेगी!" लेकिन **शिरीष डरा नहीं।** वो चिल्लाया – “**हम आज़ादी लेकर रहेंगे!**” और फिर **सीना ताने तिरंगे के साथ आगे बढ़ गया।**

धाँय! गोली चली... शिरीष कुमार वहीं गिर पड़ा – लेकिन तिरंगा उसके हाथ से नहीं छूटा। **सिर्फ़ 15 साल की उम्र में** उसने वो कर दिखाया, जो बड़े-बड़े लोग सोच भी नहीं सकते। उसके बलिदान से पूरा इलाका काँप गया। लोगों ने उसे कंधे पर उठाया और कहा – **“शिरीष कुमार अमर रहे!”**

उनकी याद में नंदुरबार में **बालशहीद शिरिष कुमार स्मारक** भी बनाया गया है।

सबक: शिरीष कुमार की कहानी हमें सिखाती है कि **देशभक्ति के लिए उम्र नहीं, साहस चाहिए।** जब कोई निडर होकर सही के लिए खड़ा होता है, तो वो इतिहास बनाता है। हम सबको आज़ादी **ऐसे ही बच्चों की कुर्बानी से** मिली है। हमें इस तिरंगे की क़ीमत को हमेशा याद रखना चाहिए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

स्वतंत्रता सेनानी नारायण दाभाडे – एक युवा का बलिदान

स्थान: *पुणे, महाराष्ट्र*

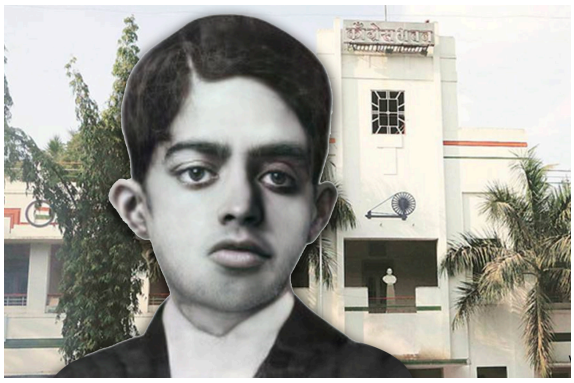

कभी सोचा है — अगर आप स्कूल जाते वक़्त रास्ते में अंग्रेज़ों के खिलाफ नारे लगाएँ, तो क्या हो सकता है?

आज हम खुलकर बोल सकते हैं — लेकिन 1942 में, एक नारा लगाना भी जेल या मौत के बराबर था! और उस दौर में, एक कॉलेज का छात्र था — नारायण दाभाडे। न कोई बड़ा नेता, न कोई मंत्री — सिर्फ़ एक हिंदुस्तानी नौजवान, जिसकी रगों में देशभक्ति बहती थी।

ये कहानी है भारत छोड़ो आंदोलन की। जब गांधी जी ने देशवासियों से कहा — **“अब बहुत हुआ! अंग्रेजों को भारत छोड़ना ही होगा!”**

उस दिन, जैसे पूरे देश में बिजली दौड़ गई। बूढ़े, जवान, और यहाँ तक कि छोटे-छोटे छात्र भी सड़कों पर उतर आए। नारायण दाभाडे भी एक ऐसा ही साहसी छात्र था — जो पुणे के गरवारे कॉलेज में पढ़ता था। लेकिन उस दिन उसने किताबें बंद कर दीं। उसने कंधे पर बस्ता नहीं — बल्कि हिम्मत उठाई। और निकल पड़ा सड़कों पर — **“अंग्रेज़ो भारत छोड़ो!”** के नारे लगाते हुए।

तिलक रोड की गलियाँ गूंज रही थीं। वो और उनके साथी निडरता से जुलूस निकाल रहे थे। तभी अंग्रेज़ों ने रास्ता रोका।

"हट जाओ!" उन्होंने कहा। लेकिन नारायण डाभाडे पीछे नहीं हटा। उसने कहा — **"हम अपने देश की आज़ादी माँग रहे हैं — और ये हमारा हक़ है!"** और तभी... धाँय! एक गोली चली! सीधी नारायण के सीने में। वो लड़खड़ाया... लेकिन गिरने से पहले — उसने एक बार फिर नारा लगाया: **"भारत माता की जय!"**

सिर्फ़ 19 साल का वो नौजवान — लेकिन हौसला ऐसा कि अंग्रेज़ भी दंग रह गए।

सबक: साहस उम्र नहीं देखता। जो सही के लिए डट जाए — वो मरकर भी अमर हो जाता है। और ये आज़ादी, जो आज हमें इतनी आसान लगती है — वो ऐसे ही बलिदानों से मिली है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

भगत सिंह झुग्गियान

स्थान: *होशियारपुर, पंजाब*

यह एक और भगतसिंह की अत्यंत प्रेरणादायक कहानी है, जिन्होंने बहुत कम उम्र में अपने **अद्भुत साहस और देशभक्ति से अंग्रेज़ों को चकित कर दिया।** भगतसिंह झुग्गियान का जन्म पंजाब के होशियारपुर ज़िले में हुआ। वे चौथी कक्षा में पढ़ते थे, लेकिन जोश और बहादुरी में वे किसी बड़े योद्धा से कम नहीं थे। एक बार स्कूल की सभा में एक अंग्रेज़ अधिकारी ने उन्हें **"ब्रिटिश हुकूमत ज़िंदाबाद"** बोलने को कहा। केवल ग्यारह साल के भगतसिंह झुग्गियान ने भरी सभा में ज़ोर से नारा लगाया — **"ब्रिटिश हुकूमत मुर्दाबाद, हिंदुस्तान ज़िंदाबाद!"**

ब्रिटिश अधिकारी ने वहीं उन्हें पीटा और यह व्यवस्था की कि उस क्षेत्र के किसी भी स्कूल में उन्हें प्रवेश न मिले।

लेकिन भगतसिंह ने हार नहीं मानी। वे स्वतंत्रता संग्राम में **गुप्त संदेशवाहक और प्रेस चालक** बन गए। अंधेरी रातों में वे **'उदारा प्रेस'** नाम की मशीन के भारी हिस्से बोरे में भरकर गुप्त क्रांतिकारी अड्डों तक पहुँचाते। कुछ दिनों बाद खाद, अनाज और रसद लेकर लौटते — उनके साहस से पुलिस भी उनसे डरने लगी!

उन्होंने केवल स्वतंत्रता संग्राम में ही योगदान नहीं दिया, बल्कि स्वतंत्रता के बाद भी किसानों और मज़दूरों के लिए काम करते रहे। 1945 में उन्होंने **आज़ादी कमेटी** की स्थापना की, जहाँ लोगों को शांति, देशभक्ति और सहयोग के लिए जागरूक किया जाता था। ब्रिटिश सरकार ने उन पर कड़ी कार्रवाई की, फिर भी वे डरे नहीं और पीछे नहीं हटे।

सबक: उम्र कभी मायने नहीं रखती; यदि जज़्बा और साहस भरपूर हो, तो छोटा बच्चा भी बड़ा काम कर सकता है। सच्चा स्वतंत्रता केवल विद्रोह नहीं, बल्कि सेवा, एकता और देशभक्ति भी है। ऐसे लोगों को हम स्वतंत्रता के सच्चे सैनिक कहते हैं। इनके नाम शायद बहुत मशहूर न हों, लेकिन प्रेरणा देने में ये सबसे बड़े होते हैं।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

एक रानी जो झुकी नहीं – बेगम हज़रत महल की कहानी

स्थान: *लखनऊ, उत्तर प्रदेश*

थोड़ी देर आंखें बंद कीजिए और सोचिए — साल 1857 है, चारों ओर हलचल मची हुई है। भारत के लोग गुलामी की जंजीरें तोड़ने के लिए खड़े हो गए हैं। झांसी में लक्ष्मीबाई तलवार लेकर रणभूमि में हैं, और दूसरी ओर — लखनऊ में एक और रानी डटकर खड़ी हैं — उनका नाम है बेगम हजरत महल।

अंग्रेज़ों ने उनके पति, नवाब वाजिद अली शाह, को सत्ता से हटाकर कलकत्ता भेज दिया। **ऐसे समय में बेगम हजरत महल ने लड़ने का निर्णय लिया।**

उन्होंने अपने छोटे बेटे को, जो उस समय केवल 11 वर्ष का था, लखनऊ का राजा घोषित किया और **खुद युद्ध की सेनापति बन गईं।** उन्होंने लखनऊ के आम लोगों को एकजुट किया, सैनिकों को प्रशिक्षण दिया और अंग्रेज़ों से भिड़ गईं। उनके नेतृत्व की ताकत इतनी अद्भुत थी कि **कुछ समय के लिए अंग्रेज़ों को लखनऊ छोड़कर भागना पड़ा।**

लेकिन, अंग्रेज़ बड़ी सेना और कूटनीति के साथ लौटे। उन्होंने लखनऊ पर फिर से हमला किया। क्या बेगम डर गईं? नहीं! **घोड़े पर सवार होकर, हाथ में तलवार लेकर, गांव-गांव घूमकर उन्होंने लोगों का हौसला बढ़ाया।** उन्होंने हिंदू-मुस्लिम सभी को एकजुट कर लड़ाई लड़ी।

जब अंग्रेज़ों के आखिरी हमले में सब कुछ नष्ट हो गया, तो वे नेपाल चली गईं। वहां उन्होंने शरण ली — लेकिन कभी अंग्रेज़ों से माफी नहीं मांगी, फिर से रानी बनने की याचना नहीं की, और अपने देश के साथ गद्दारी नहीं की।

सीख: सच्चा नेतृत्व वही है जो संकट में भी अडिग रहे। कोई भी स्त्री सेना का नेतृत्व कर सकती है और अंग्रेज़ों से लड़ सकती है। देशभक्ति का मतलब है — हालात कितने भी कठिन हों, देश के लिए लड़ते हुए कभी हार न मानना।

आज हम खुली हवा में सांस ले रहे हैं, तो यह याद रखना जरूरी है कि हमारे स्वतंत्रता संग्राम में सिर्फ पुरुषों की ही नहीं, बल्कि वीर महिलाओं की भी बराबर की हिस्सेदारी रही है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

किताबों वाला क्रांतिकारी: पीर अली खान की कहानी

स्थान: *पाटना, बिहार*

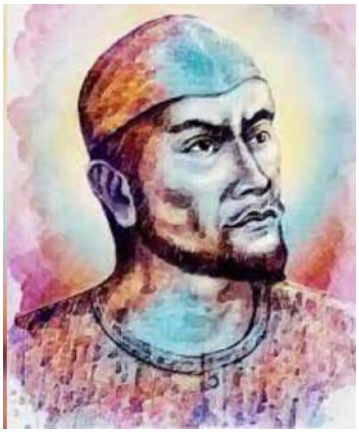

बहुत साल पहले की बात है। यह कहानी है एक बहादुर किताबवाले की — पीर अली खान की। वे किताबें बेचते थे, लेकिन उनके दिल में आज़ादी की मशाल जल रही थी।

सन् 1812 में, पीर अली खान का जन्म पटना में हुआ। वे व्यापारी थे और एक छोटी-सी किताबों की दुकान चलाते थे। बाहर से वे साधारण आदमी लगते थे, लेकिन भीतर से वे एक ज्वालामुखी थे — अंग्रेज़ों के अन्याय के खिलाफ फटने को तैयार।

1857 में जब देशभर में बग़ावत की लहर उठी — जिसे हम आज 'पहला स्वतंत्रता संग्राम' कहते हैं — तब पीर अली खान ने अंग्रेज़ों के खिलाफ लोगों को संगठित करना शुरू किया। वे गुप्त संदेश पहुंचाते, लोगों को जागरूक करते और क्रांति की योजना बनाते थे। वे फ़ैज़ाबाद के मौलवी अहमदुल्ला शाह के घनिष्ठ सहयोगी थे और बिहार से लेकर उत्तर भारत तक क्रांतिकारियों का मज़बूत जाल बिछा चुके थे।

लेकिन अंग्रेज़ों को शक हो गया। पटना में उनकी दुकान पर छापा डाला गया। वहां से क्रांतिकारी पत्रक, पत्र और योजनाएं बरामद हुईं। पीर अली को गिरफ्तार कर लिया गया और उन पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया।

जब उन्हें अदालत में पेश किया गया, तो उन्होंने बिना डरे कहा: **"मैंने भारत की आज़ादी के लिए काम किया है। यह मेरा कर्तव्य था — कोई अपराध नहीं।"**

18 जुलाई 1857 को, पटना में सबके सामने उन्हें फांसी दे दी गई। लेकिन उनकी मौत ने लोगों को डराने के बजाय, पटना में और भी बग़ावत भड़का दी। आज शायद इतिहास की किताबों में उनका नाम छोटे अक्षरों में लिखा हो — लेकिन स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में पीर अली खान हमेशा के लिए अमर हैं।

सीख: उनका साहस हमें यह सिखाता है कि अगर सीने में हिम्मत और दिल में देश के प्रति प्रेम हो, तो एक साधारण किताबवाला भी इतिहास बदल सकता है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

कैप्टन भाऊ और तूफान सेना की कहानी

स्थान: *सातारा, महाराष्ट्र*

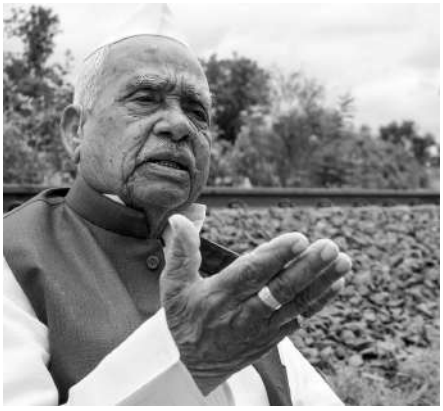

बहुत साल पहले की बात है, जब भारत अंग्रेज़ों की गुलामी में था। अंग्रेज़ हमारे देश की संपत्ति लूट रहे थे और जो भी विरोध करता, उसे जेल में डाल देते।

लेकिन एक जगह थी — सातारा — जहां कुछ बहादुर लोग चुप नहीं बैठे। वहां एक गुप्त सरकार बनी थी, जिसका नाम था — **प्रति सरकार**। यह सरकार छिपकर काम करती, गरीबों की मदद करती और अंग्रेज़ों को चकमा देती थी।

इसी सरकार में एक साहसी युवक थे — रामचंद्र श्रीपती लाड। सब उन्हें प्यार से **कप्तान भाऊ** कहते थे।

कप्तान भाऊ कोई साधारण नेता नहीं थे। उन्होंने बच्चों और किशोरों की एक टोली बनाई, जिसका नाम रखा — **तूफ़ान सेना**! इस सेना में 10 से 16 साल के बच्चे थे, जो बिना डरे अंग्रेज़ों के खिलाफ काम करते — चिट्ठियां पहुंचाते, गुप्त सूचना देकर लोगों को सतर्क करते और जरूरत पड़ने पर हथियार भी लाते। तूफ़ान सेना में सिर्फ बच्चे ही नहीं, बल्कि किशोर, युवक और कुछ बुजुर्ग भी शामिल थे।

7 जून 1943 की रात की बात है। भाऊ और उनके साथियों ने शेणोली रेलवे स्टेशन पर एक ट्रेन रोकी। उस ट्रेन में अंग्रेज़ों का ख़ज़ाना और महत्वपूर्ण सामान था। भाऊ और उनके साथियों ने टिकट खिड़की खोली, पैसे निकाले और प्रति सरकार को दे दिए। इन पैसों से गांवों में स्कूल चलाए गए, अनाज बांटा गया और क्रांतिकारियों की मदद की गई।

जब किसी ने पूछा, **"क्या आपने चोरी की?"** तो भाऊ हंसकर बोले: **"हमने चोरी नहीं की। अंग्रेज़ों ने हमें सालों-साल लूटा है। हमने तो अपने लोगों के लिए बस थोड़ा-सा वापस लिया है, इसे चोरी क्यों कहें?"**

कप्तान भाऊ का दिल बहुत बड़ा था। उन्होंने कभी डर को पास नहीं आने दिया। भारत के स्वतंत्र होने के बाद भी उन्होंने समाजसेवा जारी रखी। वे 100 साल जिए और 2022 में दुनिया को अलविदा कह दिया।

सीख: देश के लिए कुछ करने के लिए उम्र की कोई सीमा नहीं होती। सत्य और साहस से बड़ा कोई हथियार नहीं। कठिन समय में छोटे-छोटे बच्चे भी हीरो बन सकते हैं! कप्तान भाऊ जैसे लोगों की वजह से ही आज हम खुली हवा में सांस ले पा रहे हैं। उनकी तूफ़ान सेना भले ही बच्चों की थी, लेकिन उनका काम बड़ों से भी महान था।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

गणेश शंकर विद्यार्थी

स्थान: *इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश*

यह कहानी है एक ऐसे नायक की, जिसने न तो तलवार से लड़ाई लड़ी, न बंदूक से... लेकिन फिर भी जिसके साहस की मिसाल दी जाती है। नाम था — गणेश शंकर विद्यार्थी। ऐसे सैनिक, जिन्होंने **कलम को हथियार बनाया और सत्य व मानवता के लिए संघर्ष किया।**

गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म 1890 में उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद ज़िले में हुआ। पढ़ाई में होशियार, विचारों में स्पष्ट, और दिल में देश के लिए जलती लौ। बहुत कम उम्र में वे पत्रकारिता की ओर मुड़े और जल्द ही **'प्रताप'** नाम का अख़बार शुरू किया।

इस अख़बार के माध्यम से उन्होंने अंग्रेज़ों के जुल्म, किसानों की दुर्दशा और सामाजिक अन्याय के खिलाफ आवाज़ उठाई। अंग्रेज़ यह सहन नहीं कर पाए और उन्हें कई बार जेल में डाला गया। लेकिन विद्यार्थी जी ने कभी हार नहीं मानी।

वे सिर्फ़ पत्रकार ही नहीं, बल्कि सच्चे समाजसेवक भी थे।

स्वतंत्रता संग्राम को कमजोर करने के लिए अंग्रेज़ों ने "फूट डालो और राज करो" की नीति अपनाई। इसके तहत उन्होंने जानबूझकर हिंदू और मुस्लिम समुदायों में झगड़े भड़काए। 1931 में कानपुर में भयानक दंगे हुए। लेकिन गणेश शंकर विद्यार्थी हिंसा रोकने के लिए खुद सड़कों पर उतर आए। **हिंदू होते हुए भी उन्होंने कई मुस्लिमों की जान बचाई।**

इसी प्रयास में, **भीड़ ने उनकी हत्या कर दी।** वे शहीद हो गए।

लेकिन उनके बलिदान ने साबित कर दिया कि सच्चा देशभक्त वही है, जो सबको जोड़ने का काम करता है — भले ही इसके लिए अपनी जान क्यों न गंवानी पड़े।

सीख: गणेश शंकर विद्यार्थी की कहानी हमें सिखाती है कि समाज परिवर्तन के लिए सिर्फ़ नारेबाज़ी नहीं, बल्कि बलिदान भी ज़रूरी है। गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे लोग हमारे दिलों में, अंधेरे में भी रोशनी देने वाले दीपक की तरह, हमेशा जीवित रहेंगे।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

दिल्ली का शूर सेनापति – बख्त ख़ान

स्थान: *दिल्ली*

वर्ष था 1857। पूरे भारत में अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ बग़ावत की चिंगारी भड़क उठी थी। मेरठ, कानपुर, झाँसी, लखनऊ... हर जगह सैनिक विद्रोह कर रहे थे। इसी समय, बरेली से एक लम्बे, सशक्त और बुद्धिमान अफ़सर अपने सैकड़ों सैनिकों के साथ दिल्ली की ओर चला। उसका नाम था — बख्त ख़ान।

बख्त ख़ान कोई साधारण सैनिक नहीं थे। वे ईस्ट इंडिया कंपनी की फ़ौज में ***सुबेदार मेजर*** जैसे उच्च पद पर थे। लेकिन अंग्रेज़ों का अत्याचार, शोषण और देश की लूट देखकर उनके दिल में विद्रोह का ज्वालामुखी फूट पड़ा।

दिल्ली पहुँचते ही उन्होंने मुग़ल बादशाह बहादुर शाह ज़फ़र से भेंट की और दृढ़ स्वर में कहा — **"महाराज, मुझे अपने सैनिकों की कमान सौंप दीजिए। मैं अंग्रेज़ों को दिल्ली से खदेड़ दूँगा।"**

बख्त ख़ान ने फ़ौज को संगठित किया, तोपखाने की ज़िम्मेदारी संभाली और अंग्रेज़ों पर ज़बरदस्त हमला बोला। वे साहसी, अनुशासनप्रिय और दूरदर्शी सेनापति थे।

लेकिन दुर्भाग्य से, दरबार के कुछ लोगों ने उनकी सलाहों को नज़रअंदाज़ किया — और यही सबसे बड़ी भूल साबित हुई।

अंततः अंग्रेज़ों ने दिल्ली पर दोबारा क़ब्ज़ा कर लिया। बख्त ख़ान बहादुरी से लड़े, पीछे हटे, लेकिन कभी हार नहीं मानी। आने वाले वर्षों में भी वे अंग्रेज़ों से जूझते रहे। **अंत में रणभूमि में वे शहीद हो गए।** उनकी मृत्यु पर अंग्रेज़ों ने राहत की साँस ली — क्योंकि **बख्त ख़ान जैसा वीर उनके लिए सबसे बड़ा ख़तरा था।**

आज उनकी समाधि कहाँ है, यह किसी को नहीं पता। लेकिन 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के एक पराक्रमी योद्धा के रूप में उनका नाम इतिहास में अमर है। अनेक सैनिकों और आम लोगों ने उनसे अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ लड़ने की प्रेरणा पाई।

सबक: देशभक्ति केवल भाषणों से सिद्ध नहीं होती — यह कर्म और बलिदान से सिद्ध होती है। **बख्त ख़ान ने स्वतंत्रता का स्वप्न देखा और अंतिम साँस तक उसके लिए लड़े।** आज हम स्वतंत्र भारत में जी रहे हैं, तो उसमें बख्त ख़ान जैसे अनगिनत अज्ञात वीरों का बड़ा योगदान है। उनके बलिदान को याद रखकर हमें भी ईमानदारी, साहस और सेवा-भाव से देश के लिए काम करना चाहिए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

बाबू गेनू – 22 वर्ष का निर्भीक क्रांतिकारी

स्थान: *पुणे, महाराष्ट्र*

आज मैं आपको एक युवक की कहानी सुनाने जा रहा हूँ। उम्र केवल 22 वर्ष... लेकिन साहस ऐसा कि ब्रिटिश हुकूमत ही हिल गई!

उसका नाम था **बाबू गेनू**। 1908 में, पुणे के एक गरीब दलित परिवार में बाबू गेनू का जन्म हुआ। घर की आर्थिक स्थिति बेहद कठिन थी। बचपन से ही वे कपड़ा मिल में मज़दूर के रूप में काम करने लगे। पढ़ाई पूरी नहीं हो पाई, लेकिन उनके दिल में देशभक्ति की लौ हमेशा जलती रही।

महात्मा गांधी के स्वदेशी आंदोलन का उन पर गहरा असर पड़ा। विदेशी वस्तुओं के प्रति उनके मन में घोर विरोध पैदा हो गया। 1930 में पूरे भारत में विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया जा रहा था। लोग खादी पहनते थे और विदेशी कपड़े जलाते थे।

एक दिन, पुणे की सड़कों से एक ट्रक गुज़र रहा था। उसमें इंग्लैंड से लाए गए कपड़े थे और साथ में अंग्रेज़ अधिकारी उनकी रखवाली कर रहे थे। तभी वहाँ बाबू गेनू पहुँचे। उन्होंने ट्रक रोककर दृढ़ स्वर में कहा — **"यह विदेशी, देशद्रोही कपड़ा हमारी धरती पर नहीं बिकेगा! अगर बेचना है तो पहले मुझे कुचलना पड़ेगा!"**

अंग्रेज़ अधिकारी गुस्से से तिलमिला गया। उसने ट्रक चालक को आगे बढ़ने का आदेश दिया, लेकिन चालक ने इंकार कर दिया। क्रोध में अंग्रेज़ खुद ट्रक पर बैठा और चिल्लाया — **"इस भारतीय को मैं गाड़ी के नीचे कुचल दूँगा!"**

और फिर उसने ट्रक बाबू गेनू के ऊपर चढ़ा दिया। वे वहीं शहीद हो गए!

यह ख़बर आग की तरह फैल गई। हज़ारों लोग सड़कों पर उतर आए, विदेशी कपड़ों की होली जलाई गई। एक साधारण मज़दूर के बलिदान ने पूरे पुणे को आंदोलित कर दिया।

सबक: बाबू गेनू हमें सिखाते हैं कि **देशभक्ति** के लिए न तो धन की आवश्यकता होती है, न ऊँचे पद की — यह तो **दिल से जन्म लेती है।** अगर एक मज़दूर ने अपने प्राण देकर अंग्रेज़ों को रोक दिया, तो हम भी देश के लिए अवश्य कुछ कर सकते हैं।

आज जब आप खादी या कोई भी स्वदेशी वस्तु इस्तेमाल करते हैं, तो याद रखिए — आप बाबू गेनू का अधूरा सपना आगे बढ़ा रहे हैं।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

अशफाकउल्ला खान

स्थान: *शहाजहानपूर, उत्तर प्रदेश*

भारत ब्रिटिशों के अधीन था — वह बहुत पुराना समय था। 1900 में उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर शहर में एक साहसी बालक का जन्म हुआ — उसका नाम था **अशफ़ाक़ुल्ला ख़ान**। वह पठान मुस्लिम परिवार से थे, लेकिन उनके हृदय में धर्म से बढ़कर देश के प्रति प्रेम गहराई से बसा हुआ था।

बचपन से ही उन्हें स्वतंत्र भारत का सपना आकर्षित करता था। अंग्रेजों के अन्याय से वे व्याकुल हो उठते थे और भारत को स्वतंत्र देखना ही उनकी सबसे बड़ी इच्छा थी।

धीरे-धीरे वे शहीद-ए-आज़म भगत सिंह और राम प्रसाद बिस्मिल जैसे क्रांतिकारियों के संपर्क में आए और *हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन (HRA)* नामक क्रांतिकारी संगठन में शामिल हो गए।

1925 में उन्होंने और उनके साथियों ने एक साहसी योजना बनाई — अंग्रेजों के ख़ज़ाने को लूटकर क्रांति के लिए धन एकत्र करना। यही योजना इतिहास में ***काकोरी कांड*** के नाम से प्रसिद्ध हुई। 9 अगस्त को उन्होंने एक ट्रेन रोककर अंग्रेजों का ख़ज़ाना लूटा। इस साहसिक कार्य से अंग्रेज हिल गए और क्रांतिकारियों की तलाश तेज़ कर दी गई।

कुछ महीनों बाद, अशफ़ाक़ुल्ला ख़ान अपने ही एक परिचित के विश्वासघात के कारण पकड़े गए। जेल में उन पर अमानवीय अत्याचार हुए, लेकिन अंग्रेजों ने कितनी भी पूछताछ की, उन्होंने किसी भी साथी का नाम उजागर नहीं किया। उन्हें फैज़ाबाद जेल में रखा गया।

19 दिसंबर 1927 को उन्हें फाँसी दी गई। फाँसी से पहले उन्होंने दृढ़ स्वर में कहा — ***"मैं मुसलमान हूँ, मेरा पुनर्जन्म में विश्वास नहीं है, लेकिन फिर भी मैं बार-बार भारत में जन्म लेना चाहता हूँ और हर बार देश के लिए बलिदान देना चाहता हूँ।"***

सबक: अशफ़ाक़ुल्ला ख़ान ने यह साबित किया कि सच्चा देशभक्त धर्म, जात या पंथ से ऊपर उठकर जीता है — वह केवल मातृभूमि के लिए जीता है और उसी के लिए अपने प्राण न्यौछावर करता है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

भाई कोतवाल - माथेरानचा क्रांतिवीर

स्थान: *माथेरान, महाराष्ट्र*

पहाड़ों की गोद में बसा माथेरान गाँव, वहीं एक साहसी युवक का जन्म हुआ — भाई कोतवाल। उनका हृदय केवल माथेरान के लिए नहीं, बल्कि पूरे भारत के लिए धड़कता था।

भाई कोतवाल एक होशियार विद्यार्थी, वकील और समाजसेवी थे। किसानों और गरीब परिवारों की मदद के लिए उन्होंने स्कूलें शुरू कीं और ज़रूरतमंदों को सस्ती दरों पर भोजन मिल सके, इसके लिए अनाज की दुकानें भी खोलीं। **उन्होंने लोगों को जात-पात और धर्म की दीवारें भूलकर आपस में मित्र बनने की प्रेरणा दी।**

उस समय अंग्रेज़ों के अत्याचार दिन-ब-दिन बढ़ रहे थे। युवाओं के मन में आक्रोश उमड़ रहा था। भाई कोतवाल ने ठान लिया — **“अब बहुत हो गया! अब हम आवाज़ उठाएँगे!”** वे भारत छोड़ो आंदोलन में शामिल हुए और ठाणे ज़िले में भूमिगत रहकर अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ काम करने लगे।

उनका सबसे बड़ा योगदान था — गुप्त सूचनाएँ पहुँचाना, अंग्रेज़ी टेलीफ़ोन लाइनों को काटना, ब्रिटिश गाड़ियों को बाधित करना... जिससे स्वतंत्रता संग्राम को नई ऊर्जा मिली। अंग्रेज़ उनका पीछा कर रहे थे, लेकिन भाई कोतवाल कभी जंगल में, कभी पहाड़ों में, तो कभी गाँव में छिपकर अपना काम करते रहे।

लेकिन एक दिन, विश्वासघात के कारण अंग्रेज़ों ने उन्हें पकड़ लिया। उन्हें ठाणे जेल में डाल दिया गया। अंग्रेज़ों को लगा कि मृत्यु के भय से भाई कोतवाल सब राज़ खोल देंगे। लेकिन उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा और सारे रहस्य अपनी छाती में ही दबा लिए। हताश होकर, अंग्रेज़ों ने उन्हें मृत्युदंड की सज़ा सुनाई।

22 अगस्त 1943 को सज़ा सुनाई गई और 10 मई 1945 को भाई कोतवाल ने फाँसी के फंदे को हँसते-हँसते चूमा... लेकिन तिरंगे को कभी झुकने नहीं दिया।

सबक: भाई कोतवाल ने सिखाया कि स्वतंत्रता की लड़ाई केवल तलवार से नहीं, बल्कि साहस, बुद्धिमत्ता और निष्ठा से भी जीती जाती है। वे एक सच्चे *अनकहे* नायक हैं — जिनके बलिदान से आज हम खुली हवा में साँस ले सकते हैं।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

अहिंसा के सच्चे बादशाह: ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान

स्थान: *उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत, पाकिस्तान*

बहुत साल पहले, आज के पाकिस्तान में, एक ऐसे पठान योद्धा का जन्म हुआ, जो तलवार से नहीं, बल्कि शांति और प्रेम से लड़ना चाहता था। उनका नाम था — खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान। लोग उन्हें प्यार से ***सरहदी गांधी*** कहते थे।

पठान समाज के बारे में आम धारणा थी कि वे गुस्सैल और झगड़ालू होते हैं। लेकिन खान साहब ने अपने लोगों से कहा — ***"असली हिम्मत तलवार उठाने में नहीं, बल्कि गुस्से को शांत रखने में है।"***

उन्होंने अपना पूरा जीवन अहिंसा और सेवा के मार्ग को समर्पित किया। उन्होंने **'खुदाई खिदमतगार'** नाम का संगठन बनाया — जिसका अर्थ है ***ईश्वर के सेवक***। इस संगठन के कार्यकर्ता हथियार नहीं उठाते थे, बल्कि लाल कुर्ता पहनकर सेवा, सत्य और भाईचारे का संदेश फैलाते थे। इस संगठन में हज़ारों पठान जुड़े — और खास बात यह थी कि **इसमें छोटे बच्चे भी शामिल थे!**

ये बच्चे बिलकुल नहीं डरते थे। वे गाँव-गाँव घूमकर अंग्रेज़ अधिकारियों की गतिविधियों पर नज़र रखते, लोगों को जागरूक करते, और सत्याग्रह के माध्यम से अंग्रेज़ों को परेशान करते — वह भी बिना किसी हिंसा के! **ये बच्चे न तो जेल जाने से डरते, न ही पुलिस की मार से।** एक बार तो एक अंग्रेज़ अधिकारी ने कहा — ***"इन बच्चों जितने बहादुर हमने किसी को नहीं देखा!"***

अंग्रेज़ हैरान रह गए — इतने वीर लोग, पर हाथ में हथियार नहीं! लेकिन खान साहब अडिग रहे — ***"हमें बदला नहीं, हमें बदलाव चाहिए।"***

उनकी इस सोच ने पठानों की छवि बदल दी। दुनिया को दिखा दिया कि असली वीरता की कसौटी है — दूसरों को माफ करना और देश के लिए शांति के रास्ते पर संघर्ष करना।

सबक: खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान हमें सिखाते हैं — अगर दिल बड़ा हो, तो हिंसा की कभी ज़रूरत नहीं पड़ती।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

अल्लाह बख्श सुमरू

स्थान: *सिंध*

वह समय बहुत कठिन था। भारत पर अंग्रेज़ों का राज था। हर कोना स्वतंत्रता के लिए तड़प रहा था। कहीं प्रदर्शन हो रहे थे, कहीं नारे लग रहे थे। लेकिन इस संघर्ष में एक और ख़तरे की छाया फैल रही थी — कुछ लोग धर्म के नाम पर भारत के टुकड़े करने की बात कर रहे थे।

ऐसे समय में, एक निडर नेता आगे आए — अल्लाह बख्श सुमरू। 1890 में सिंध प्रांत के एक साधारण परिवार में उनका जन्म हुआ। न वे किसी राजघराने से थे, न बड़े ज़मींदार। लेकिन उनके दिल में देश के लिए गहरा प्रेम और न्याय के लिए लड़ने का अदम्य साहस था। कम उम्र में ही उन्होंने राजनीति में कदम रखा। ईमानदारी और मेहनत के बल पर वे सिंध प्रांत के प्रधानमंत्री बने। लेकिन सत्ता ने उन्हें घमंडी नहीं बनाया। वे हमेशा लोगों में घुलमिलकर उनका दुख-सुख सुनते और कहते, **"मैं नेता नहीं, मैं जनसेवक हूं!"**

जब देश को आज़ादी की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी, तब कुछ लोगों ने हिंदू–मुसलमानों के बीच दीवारें खड़ी करने की कोशिश की। लेकिन अल्लाह बख्श चुप नहीं बैठे। उन्होंने **'आजाद पार्टी'** की स्थापना की और साफ़ कहा — **"भारत एक है, उसका बंटवारा कोई नहीं कर सकता! हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई — सभी इस मिट्टी के बेटे हैं।"**

ब्रिटिश शासन के विरोध में उन्होंने **अंग्रेज़ों द्वारा दी गई सभी उपाधियां और पुरस्कार लौटा दिए।** वे 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में शामिल हुए। गांधीजी की तरह उनका भी अहिंसा और एकता पर गहरा विश्वास था। उनका सपना था — एक स्वतंत्र और अखंड भारत।

भारत के विभाजन के विरोध में उन्होंने मुसलमानों के कई जुलूसों का नेतृत्व किया। उनकी आंदोलन में लाखों हिंदू–मुस्लिम एक साथ आए। यह बात उन लोगों को नागवार गुज़री जो भारत का बंटवारा चाहते थे।

14 मई 1943 को, एक कार्यक्रम में जाते समय, दो हथियारबंद व्यक्तियों ने उन पर गोली चलाई... और देश ने अपना एक सच्चा बेटा खो दिया।

सीख: अल्लाह बख्श सुमरू ने दिखा दिया कि सच्ची देशभक्ति धर्म, जाति और भाषा से ऊपर होती है। दिल में साहस और नीयत साफ़ हो, तो कोई ताकत हमें तोड़ नहीं सकती। उनकी कहानी आज भी कहती है — **"डरो मत, सच बोलो! आपस में मत लड़ो, एक साथ चलो!"**

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

जादूगर शोभाराम की कहानी

स्थान: *अजमेर, राजस्थान*

अजमेर के एक छोटे से गाँव में एक साधा, सीधा लड़का रहता था — शोभाराम गेहरवार। वह दलित समाज से था। देखने में साधारण, लेकिन उसके दिल में आज़ादी की प्रचंड ज्वाला जल रही थी।

सिर्फ़ 14–15 साल की उम्र में ही वह स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ा। उसके पास न हथियार थे, न बड़ी शिक्षा, लेकिन उसके पास एक अनोखी ताकत थी — **किसी भी रूप में घुल-मिल जाने की कला!** कभी किसान, कभी मज़दूर, तो कभी संत का वेश बदलकर वह अंग्रेज़ पुलिस की नज़रों से बच निकलता।

एक बार तो चंद्रशेखर आज़ाद ने ख़ुद उसे जंगल में बम बनाने की जगह पर ले जाया। पुलिस आस-पास होते हुए भी शोभाराम चुपचाप उनके हाथ से फिसल निकल जाता — जैसे कोई जादूगर! इसलिए लोग उसे कहते — **“अजमेर का जादूगर!”**

उसके जीवन में एक मज़ेदार लेकिन ख़तरनाक घटना भी हुई। उसके साथियों ने नदी किनारे गनपाउडर का धमाका किया और संयोग से उसी समय एक बाघ पानी पीने आया। धमाके की आवाज़ से बाघ भाग गया... लेकिन पुलिस दस्ते में हड़कंप मच गया! इस अफ़रा-तफ़री में शोभाराम और उसके साथी सुरक्षित भाग निकले।

शोभाराम मानव डाकिये की तरह भी काम करता था। ब्रिटिश सरकार चिट्ठियों की जांच करती थी, जिससे भूमिगत क्रांतिकारियों से संपर्क करना मुश्किल हो गया था। लेकिन वह साहस के साथ संदेश पहुँचाता — कई बार अपनी जान जोखिम में डालकर। एक बार तो पुलिस ने उसके पैर में गोली मार दी, फिर भी वह भागने में सफल रहा!

आज़ादी के बाद शोभाराम ने कभी कोई पद, पुरस्कार या शोहरत की मांग नहीं की। वह हमेशा कहता — **“मैंने नाम के लिए नहीं, देश के लिए काम किया है।”** शोभाराम जैसे बहादुर, चतुर और निःस्वार्थ देशभक्तों की वजह से ही हम आज़ाद हैं। उन्हें सत्ता की लालसा नहीं थी — बस देश के लिए जीने की लगन थी।

सीख: आप युवा हों या वृद्ध — अन्याय के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाना ज़रूरी है। असली ताकत बड़ी कुर्सी में नहीं, बल्कि बड़े दिल, साहस और अटल संकल्प में होती है।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

हौसा पाटिल: जंगलों की बहादुर दीदी

स्थान: *सातारा, महाराष्ट्र*

क्या आपने कभी कल्पना की है कि कोई बिना बंदूक, बिना सेना और बिना डरे अंग्रेज़ों से लड़ सकता है?

हौसा पाटील ऐसी ही एक वीरांगना थीं — जो दिन में खेत जोततीं और रात में जंगल में जाकर आज़ादी के लिए लड़तीं! महाराष्ट्र के एक छोटे से गाँव से निकलकर उन्होंने ब्रिटिश राज को खुली चुनौती दी — और वह भी बिना रुके, बिना डरे।

उस समय अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए **'प्रति सरकार'** नाम का एक गुप्त स्वराज्य खड़ा किया गया था — यानी जनता का अपना सरकार! हौसा दीदी इस सरकार के लिए सब कुछ करती थीं — रात के अंधेरे में संदेश पहुँचाना, घायल साथियों को दवाइयाँ देना, अंग्रेज़ों से छिपाकर अन्न व कपड़े लाना... वह कहती थीं, **"गाँव की मिट्टी ने हमें खिलाया है, अब उस मिट्टी के लिए कुछ लौटाने का समय आ गया है!"**

हौसा दीदी की असली ताक़त थी उनकी हिम्मत और चतुराई। एक बार अंग्रेज़ सैनिक उन्हें पकड़ने गाँव में आ पहुँचे, लेकिन गाँव की महिलाओं ने उन्हें अलग-अलग जगहों पर छिपा दिया — कभी धान के खेतों में, कभी कुएँ के पास, तो कभी जंगल की पगडंडियों पर।

उनका सबसे रोमांचक अनुभव था कृष्णा नदी पार करना। वह काली रात थी, पानी उफान पर था, पुल कहीं नहीं था। लेकिन हौसा दीदी नहीं डरीं। वह और उनके साथी कभी लकड़ी के पटरे पर, तो कभी बैलगाड़ी के टूटे पहिये पर बैठकर नदी पार कर गए। पानी का बहाव तेज़ था, पानी बर्फ जैसा ठंडा — लेकिन उनके दिल में जल रही आज़ादी की ज्वाला और भी तेज़ थी!

स्वतंत्रता के इतिहास में हम कई बड़े नाम सुनते हैं, लेकिन हौसा पाटील जैसी साधारण, फिर भी असाधारण महिलाओं को हम भूल नहीं सकते। वह अक्सर कहती थीं — **"हमने कुछ बड़ा नहीं किया, हमने बस ज़रूरी काम किया।"**

शिक्षा: हौसा पाटील कोई रानी नहीं थीं, न उनके पास तलवार थी, न सेना। लेकिन फिर भी वह सच्ची योद्धा थीं। छोटे-से छोटे काम भी यदि दिल से किए जाएँ, तो देश को आज़ाद कराने में बड़ी भूमिका निभा सकते हैं — यह उन्होंने साबित किया। आज हम स्कूल जा सकते हैं, अपने विचार खुलकर रख सकते हैं — क्योंकि हौसा दीदी और उनके जैसे हज़ारों नायकों ने वह आज़ादी हमारे लिए जीती। हमें भी उनकी तरह निर्भीक, निडर और सच्चे देशभक्त बनना चाहिए।

कहानियां

भारत के महान स्वतंत्रता संग्राम के अनसुने नायकों की

उषा मेहता: सबसे शांत, लेकिन सबसे बड़ी आवाज़

स्थान: *सूरत, गुजरात*

साल था 1920। जगह – गुजरात के सूरत शहर में एक प्यारी-सी बच्ची का जन्म हुआ। उसका नाम था उषा मेहता। जहाँ बाकी बच्चे आँगन में खेलते, वहीं उषा के दिल में देशभक्ति की प्रखर लौ जल रही थी।

एक बार, जब वह सिर्फ़ 8 साल की थीं, उन्होंने गांधीजी के सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लिया। उन्होंने पूरे जोश से नारे लगाए – **"ब्रिटिश भारत छोड़ो!"**

1942 में गांधीजी ने भारत छोड़ो आंदोलन शुरू किया। ब्रिटिश सरकार घबरा गई और गांधीजी, नेहरूजी समेत सभी बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया। अब एक बड़ा सवाल था – गांधीजी का संदेश और सच्ची ख़बरें लोगों तक कैसे पहुँचें?

इसी समय उषा दीदी ने एक साहसी योजना बनाई। उन्होंने कुछ भरोसेमंद साथियों के साथ मिलकर **एक गुप्त रेडियो स्टेशन शुरू किया** – "कांग्रेस रेडियो"। यह एक गुप्त कमरे से चलता था, और रोज़ाना उषा दीदी लोगों तक पहुँचाती थीं – आंदोलन की असली ख़बरें, गांधीजी और नेताओं के भाषण, और आगे की कार्ययोजना।

ब्रिटिश पुलिस को इसकी भनक लगी। तलाश शुरू हुई। कई बार उषा दीदी और उनके साथी रेडियो लेकर इधर-उधर भागे, छिपे, लेकिन हार नहीं मानी। आखिर 12 अगस्त 1942 को अंग्रेज़ों ने उन्हें पकड़ लिया। **उनकी सख़्त पूछताछ हुई, धमकियाँ दी गई – लेकिन उषा दीदी चट्टान-सी अडिग रहीं।** उन्होंने किसी भी साथी का नाम नहीं बताया।

उन्हें जेल हुई, लेकिन उनके मन में बस एक सपना था – **"मेरा भारत स्वतंत्र हो!"**

स्वतंत्रता के बाद, उषा मेहता ने शिक्षा, महिला सशक्तिकरण और समाजसेवा के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मविभूषण' समेत कई सम्मान प्रदान किए।

सीख: देश की सेवा करने के लिए उम्र की कोई बाधा नहीं, बस साहस चाहिए। एक लड़की भी अपनी आवाज़ से इतिहास बना सकती है। सत्य और साहस से बड़ी कोई ताकत नहीं।